अध्ययन सामग्री
बी. ए. पार्ट 3
प्रश्नपत्र – पंचम

डॉ० मालविका तिवारी
सहायक प्रोफेसर
संस्कृत विभाग
एच० डी० जैन महाविद्यालय
वी. कुं. सिं. वि०, आरा

24.08.20

कठोपनिषद्

कठोपनिषद् के प्रतिपाद्य विषय पर प्रकाश डालें।

कठोपनिषद् कृष्ण यजुर्वेद की कठ शाखा से सम्बन्धित है। यह उपनिषद् साहित्य का अमूल्य रत्न है। कठ शाखा से सम्बद्ध होने के कारण ही इसे कठोपनिषद् नाम से अभिहित किया जाता है। तैत्तिरीय ब्राह्मण में नचिकेता की कथा पाई जाती है। इसी कथा का सर्वांगीण विकास कठोपनिषद् में उपलब्ध होता है। इसमें यमराज एवं नचिकेता-संवाद के माध्यम से अध्यात्म विद्या का गम्भीर विवेचन किया गया है। यह दो अध्यायों में विभक्त है। प्रत्येक अध्याय में तीन-तीन वल्लियाँ हैं। इस प्रकार इस ग्रन्थ में दो अध्याय एवं छह वल्लियाँ हैं।

कठोपनिषद् के प्रथम अध्याय की प्रथम वल्ली में पितृभक्ति तथा आतिथ्य के महत्त्व का प्रतिपादन किया गया है। अपने पूज्य पिता को नरक का भागी होने से वंचित करने हेतु बालक नचिकेता स्वयं को दान के रूप में अर्पित कर देता है। पितृ-वचन को सत्य करने के उद्देश्य से वह पूज्य पाद पिता से विनम्र भाव से प्रार्थना करता है कि वे यमराज के यहाँ भेज दें। वह यमराज के यहाँ चला भी जाता है। यमराज उस समय निवास से अनुपस्थित पाए जाते हैं। अतः बालक नचिकेता निरन्तर तीन दिनों

तक बिना अन्न-जल ग्रहण किए ही उनकी प्रतीक्षा करता है। तीन दिनों के पश्चात् यमराज अपने घर लौटते हैं। वे सर्वशक्तिमान एवं सर्वप्राणहर्ता हैं। फिर भी बालक नचिकेता के तीन दिनों तक अपने आवास पर उपवास की सूचना प्राप्त कर वे घबरा जाते हैं। अतिथि के भूखा रहने पर मनुष्य का सर्वनाश हो जाता है — इस तथ्य के ज्ञाता यमराज नचिकेता को प्रसन्न करने के लिए उसे तीन वर प्रदान करते हैं। यम के द्वारा प्रदत्त प्रथम वर में बालक नचिकेता अपने पिता के परितोष एवं प्रसन्नता की माँग करता है। इसी क्रम में अतिथि सत्कार के महत्त्व का भी प्रतिपादन किया गया है।

द्वितीय वल्ली में श्रेय एवं प्रेय का सम्यक् प्रतिपादन किया गया है। इस वल्ली में यह स्पष्टतः निर्दिष्ट है कि मनुष्य के समक्ष कल्याणकारी तथा क्षणिक सुख पहुँचानेवाले पदार्थ विद्यमान हैं। विवेकी व्यक्ति प्रिय लगने वाले भोग-साधन की अपेक्षा कल्याणकारी साधनों को ही स्वीकारता है। परन्तु मन्दबुद्धि एवं अविवेकी व्यक्ति सांसारिक सुखों को देनेवाले साधनों के आकर्षण में पड़कर उन्हें ही अपनाता है। परिणामतः वह जन्म-मरण के चक्कर में पड़कर नानाविध दुःखों को भोगता रहता है। अतः बुद्धिसम्पन्न व्यक्ति को प्रेय-मार्ग का परित्याग कर श्रेय-मार्ग का ही अनुसरण करना चाहिए। श्रेय-मार्ग कल्याणकारी है तथा प्रेय-मार्ग दुःखदायी।

तृतीय वल्ली का प्रतिपाद्य विषय है - जीवात्मा तथा परमात्मा के भेद को रथ-रूपक के माध्यम से समझाना। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि तृतीय वल्ली में रथ-रूपक की कल्पना के माध्यम से श्रेय एवं प्रेय मार्ग द्वारा प्राप्त होने वाले फलों को प्रदर्शित किया गया है। शरीर के अन्दर दो तत्त्व हैं। एक है - कर्मफल का भोक्ता तथा दूसरा है कर्मफलों का अभोक्ता। कर्मफलों का अभोक्ता कर्म से बिल्कुल अलग रहकर केवल द्रष्टा के रूप में स्थित रहता है। मानव जीवन रथसदृश्यवत् है। यह शरीर ही रथ है। जीवात्मा इसका स्वामी या रथी है। इसका परम लक्ष्य

परमात्मा को प्राप्त करना है। इस शरीररूपी रथ का सारथी बुद्धि है तथा अश्व हैं इन्द्रियाँ। मन लगाम है जो इन्द्रियरूपी अश्वों को नियन्त्रित करता है। भोग्य विषय ही हरे-हरे घास हैं। ये इन्द्रियरूपी अश्वों को अपनी ओर आकृष्ट कर मार्गच्युत कर देते हैं। परन्तु बुद्धिरूपी सारथी मन-रूपी लगाम से उन इन्द्रियरूपी अश्वों को पूर्णतः नियन्त्रित करता है। यदि नियन्त्रण नहीं रहा तो जीवात्मा मोक्षमार्ग से च्युत होकर पतन के गर्त में गिर जाता है। अतः इस रथ-रूपक से यह सिद्ध हो जाता है कि श्रेय मार्ग का अनुसरणकर्ता विवेकी होता है तथा प्रेय मार्ग का यात्री अविवेकी। रथ एवं रथी के रूपक के उपन्यास से यह शिक्षा दी गयी है कि मनुष्य को अपने मन एवं इन्द्रियों पर पूर्ण नियन्त्रण रखना चाहिए तथा अपने परम लक्ष्य मोक्ष की प्राप्ति की ओर निरन्तर अग्रसर होते रहना चाहिए।

उपर्युक्त तथ्यों के अतिरिक्त कठोपनिषद् में अन्य महत्त्वपूर्ण तथ्यों पर भी पूर्ण प्रकाश डाला गया है। इसमें यह स्पष्टतः निर्दिष्ट है कि मनुष्य को सदा आत्मनिरीक्षण करना चाहिए। उसे सदा यह ध्यान रखना चाहिए कि वस्तुतः वह क्या है और करता क्या है। दूसरों की आलोचना से पूर्णतः विरत रहकर आत्मनिरीक्षण करना चाहिए। इससे वास्तविकता का ज्ञान होता है तथा अमृतत्व की प्राप्ति होती है।

आत्मज्ञान का भी प्रतिपादन कठोपनिषद् में भलीभाँति किया गया है। मानव-जीवन का परम लक्ष्य है सांसारिक आवागमन के बन्धन से सर्वदा के लिए मुक्ति। यह तभी सम्भव है जब पूर्ण रूप से आत्मज्ञान हो जाय। अतः शरीर के विनष्ट होने के पूर्व ही आत्मज्ञान परमावश्यक है। इससे ब्रह्म का साक्षात्कार अवश्यम्भावी है। अग्रलिखित पंक्तियों से कठोपनिषद् के प्रतिपाद्य विषय की संक्षिप्ततः जानकारी हो जाती है —

उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत, क्षुरस्य धारा निशिता दुरत्यया।
दुर्गं पथस्तत्कवयो वदन्ति।